महिला संगठनों की भूमिका

(भारत में नारी आंदोलन के विशेष संदर्भ में)

पी-एच.डी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध रूपरेखा(सिन्पासिंस)

विषय-राजनीति शास्त्र

शोध निर्देशिका
डॉ सपना गहलोत

शोधार्थी
उबेदा

कला संकाय

ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय,जयपुर, (राजस्थान)

2020

महिला संगठनों की भूमिका

(भारत में नारी आंदोलन के विशेष संदर्भ में)

प्रस्तावना

नारी,प्रकृति की अदभुत कृति है। अद्‌भुत इसलिये कि प्रकृति ने उसे सृष्टि के विस्तार हेतू चुना है,जो अपने -आप में असीम गौरव की बात है। इसलिये व्यवहार में देखते हैं कि नारी के बिना पुरूष भी अधूरा है। स्त्री-पुरूष सम्बन्ध ही लौकिक सृष्टि का मूल है। अकेला पुरूष सृष्टि नहीं कर सकता-"तस्मिन्नेतास्मिन्नग्नौ देवा रेतो जुह्वति तस्या आहूर्तेर्गर्भ सम्भव:"। स्पष्ट है कि नारी के बिना पुरूष प्रजनन नहीं कर सकता।

वस्तुत: स्त्री प्रेरणाशक्ति है,तो पुरूष संघर्ष-शक्ति का नाम है। प्रेरणा और संघर्ष का संगम ही पूर्ण जीवन है। पुरूष का जीवन संघर्ष से आंरभ होता है और स्त्री का आत्मसमर्पण से। जीवन के कठोर संघर्ष में पुरूष विजयी प्रमाणित हुआ,उसे नारी ने अपने कोमल हाथों से जयमाल देकर,स्निग्ध चितवन से अभिनन्दिता करके और स्नेह-प्रवण,आत्मनिवेदन से अपने निकट पराजित कर डाला। पुरूष समाज का न्याय है,स्त्री दया। पुरूष प्रतिशोधमय क्रोध है,स्त्री क्षमा। पुरूष शुष्क कर्तव्य है,स्त्री सरस सहानुभूति तथा पुरूष बल है तो स्त्री ह्रद्य की प्रेरणा। ऐसा एक भी सामाजिक प्राणी नहींमिलेगा,जिसका जीवन माता,पत्नी,भगिनी,पुत्री आदि स्त्री के किसी न किसी रूप से प्रभावित न हुआ हो।

धीरे-धीरे शिक्षित नारियों ने इस बंधन को तोड़ा। सोलहवीं सदी के उत्तरार्ध में नारी ने भी अपने विचार सार्वजानिक तौर पर रखने आरंभ कर दिये। इस समय वह छोटी सी कसरत भी पितृसत्ता के लिये बड़ी चुनौती थी,क्योकि पितृसत्तात्मक पंरपरा के अनुसार नारी की पवित्रा,शांत और आज्ञाकारी होना होता था। 1570-1700 के मध्य नारीवादी प्रबद्ध नारियों के उदाहरण दे-देकर सिद्ध करने की कोशिश कर रही थीं कि यदि नारी को भी अनुकूल अवसर मिले,तो वे पुरूषों के समान समाज में सकारात्मक योगदान दे सकती हैं। अपने लेखों में इन नारीवादियों ने पुरूषों के स्वंय को श्रेष्ठ बताने वाले तर्को का सहारा लेकर यह सिद्ध करने की कोशिश की कि इन तर्को के अनुसार स्त्री ईश्वर की पुरूष से अधिक परिष्कृत,सर्वोत्तम और आखिरी कृति है। 1642-60 के बीच क्केकरस तथा अन्य सुधारवादियों ने इस विचार को प्रचारित किया कि ईश्वर के समक्ष सभी समान है। अब स्त्रियां भी धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेने लगी।

सत्राहवीं सदी के अंतिम चरणों में नारीवादी स्त्री लेखिकाएं सार्वजानिक रूप से परस्पर सहयोग और सौहार्द का चपरिचय दे रही थीं,तथा नारी संबंधी विभिन्न मुद्दों पर पुरूषों के साथ बढ़-चढ़कर बहस-मुबाहिया करने लगी थीं।

यद्यपि नारी पुरूषों की बराबरी तो नहीं कर रही थीं,लेकिन उन्हें अपनी योग्यता व प्रतिभा का बड़ा परिचय देने लगी थी,और इसी के साथ वह अपने प्रति चेतना ग्रहण करने लगी थी। शिक्षा की तरफ उसका रूक्षान बढ़ा और राजनैतिक क्षेत्र में भी इसी दृष्टि पहुंचने लगा

थी। मेरी वोलस्टोनक्राफ्ट की पुस्तक विडिकेशन ऑफ दी टाइम्स ऑफ वीमेन में सबसे पहले सन् 1972 में नारी के समान अधिकारों का उल्लेख पाजनीतिक क्षेत्र में प्राप्त होता है। मेरी शिक्षा के द्वारा नारी के नैतिक और बौद्धिक चरित्रा को उपर उठाना चाहता थीं। उन्होने यह संभवना प्रस्तुत की कि उच्च शिक्षा ग्रहण कर,लड़कियां डॉक्टर और व्यापारी बनने के अतिरिक्त राजनीति में भी प्रवेश कर सकती हैं।

वस्तुत पाश्चात्य जगत में नारी आंदोलन के लिये प्रारंभिक वातावरण तैयार होने लगा था। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि उन्नीसवीं सदी के छठें-सातवें दशक में मिल ने नारी के एतिहासिक दमन के लिये कानूनी व्यवस्थ को उत्तरदायी स्वीकार किया। अब नारी-विमर्श का स्वर ज्यादा मुखब होने लगा था। विवाहित अंग्रेज स्त्रियों को संपत्ति का अधिकार दिलाने के लिये जनमत तैयार किया गया। उत्तरोत्तर नारी आंदोलन की गति प्रदान करती। चिंतन शक्ति को इस प्रकार समझा जा सकता है कि सन् 1882 तक अट्ठारह-उन्नीस कानून पास किये गये,जिनमें सबसे महत्वपूर्ण 1870 का कानून था। इस कानून ने विवाहित स्त्री को संव्य अर्जित की गयी सपत्ति पर स्वामित्व तथा निजी संपत्ति का उत्तराधिकार प्रदान किया। विवाहित नारी की अन्य सभी प्रकार की संपत्ति पर अभी भी पति का अधिकार रहता था। सन् 1848 में अमेरिका में सेनेका पफाल्स में एक सभा में लगभग तीन सौं लोगों ने मांक की कि लिंग आधारित भेदभाव समाप्त होना चाहिये। इन तीन सौ लोगो में चालीस महिलाएं थीं। लेकिन परिवर्तन के दौर में जब सब कुछ बदल रहा है,विज्ञान के द्रूतगामी आविष्कार,सूचना क्रांति के प्रभाव से पूरी दुनिया ही एक परिवार का रुप लेती जा रही है,तो नारी की स्थिति में भी परिवर्तन आया है। परिवार नामक सामाजिक संस्था आज आत्यानुधिक प्रवृत्तियों से प्रभावित हो रही है। भूमंडलीकरण ने सब कुछ बदल दिया है। नारी की स्थिति मे भी बदलाव आ रहा है। वह परावलंबी से आत्मावलंबी बनती जा रही है। सलिये कहा गया हा कु परिवार की आधुनिक प्रवृत्तियों में सबसे प्रमुख है-महिलाओं की शक्ति में वृद्धि। आधुनिक परिवार की महिलायें घर की दहलीज लांघकर बाहर निकलने लगी है। व्यवसाय,उद्योग और नौकरियों में नारियां पुरूषों से कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है,जिस कारण उनकी आर्थिक व सामाजिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आया है। नारी में सामाजिक व राजनैतिक चेतना बढ़ी है। वस्तुत परावलंबी वारी अब शिक्षित होकर होकर निरंतर स्वावलंबन की तरभ गति करती जा रही है। उसकी अब मध्यकाल वाली स्थिति में बदलाव आया है। वह सब जगह आगे बढ़ती जा रही है,लेकिन विचारणीय बिंदु यह है कि तमाम नारी आंदोलनों के बाद भी ग्राम्य नारी व निम्नवर्गीय नारी की संख्या परावलंबियों में पर्याप्त है। उसमें कमी लाने के भरपूर प्रयास अत्यन्त अपेक्षणीय है।

ज्ञान की वर्तमान दशा

आधी आबादी नारी वास्तव में एक अनुपम कृति है। प्रकृति ने उसे सृष्टि के विस्तार हेतू चुना है,जो अपने आप में असीम गौरव की बात है। नारी जहां प्रेरणा का स्रोत है,तो वही पुरूष संघर्ष शक्ति का नाम है। प्रेरणा और संघर्ष का संगम ही पूर्ण जीवन है। पुरूष का

जीवन संघर्ष से आरंभ होता है और स्त्री का आत्मसमर्पण से। पुरूष समाज का न्याय है,स्त्री दया। पुरूष प्रतिशोधमय क्रोध है,स्त्री क्षमा।ऐसा एक भी सामाजिक प्राणी नहीं मिलेगा,जिसका जीवन माता,पत्वी भगिनी,पुत्री आदि सत्री के किसी न किसी रूप से प्रभावित न हुआ हो।

भारतीय इतिहास में अट्ठारहवीं सदी का समय घोऱ अवनति और अधोगति का समय है। देश अनेक रजवाड़ो में विभिक्त था,जो आपस में लड़ते रहते थे। ईस्ट इंडिया कंपनी धीरे-धीरे सत्ता बढ़ाती जा रही थी। देश के किसी राजनीतिज्ञ सत्ता को इस खतरे का पूरा ध्यान नहीं था। देश के ही अनेक लोग विदेशियों की मदद कर रहे थे। ऐसे में भारत का संकट केवल राजनीति तक सीमित नहीं था। उसका सबसे बड़ा संकट आत्मा का था। भारत अपने प्राचीन वैभव को भूल चुका था। गीता,उपनिषदों और वेदान्त की शिक्षायें लोगों की समझ से बाहर थीं। समाज के प्राय सभी अंगो को लकवा मार गया था। धर्म,शिक्षा,प्रशासन,कृषि और उद्योग,सभी क्षेत्रों में जड़ता व्याप्त थी। भारत का शरीर शिथिल और मन डरा हुआ था। इस सबका प्रभाव नारी समाज पर भी गहरे तक पड़ा। नारी जीवन पर मध्यकाल में लगायी गयी सीमाएं तनिक भी शिथिल नहीं हो पायी थीं। भारत में व्याप्त अराजकता ने नारी को और त्रासित कर दिया। अब वह संधि-सौदों में जीने वाली वस्तु बनकर रह गयी। ऊपर से नीचे तक पौरूषत्व की कीझ नारी पर जाकर उतरती थी। यद्यपि अंग्रेजों के भारत आगमन और सके प्रत्येक क्षेत्र में पनी दखल जमाने के कारण वैचारिक क्रांति का प्रारंभ हुआ था,जिसके कारण समाज सुधार पर भी ध्यान दिया जाने लगा। किंतु नारी की दशा सुधारने के प्रयास उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में ही किये जा सकें।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में जब नारी सशक्तिकरण की बात करते है,तो एक साथ कई स्थितियां किसी चलचित्र की भांति आंखो के सामने से गुजरने लगती है। ये तमाम स्थितियां भारतीय नारी के इतिहास तथा उसके संघर्ष को एक साथ बयान करती है तथा उनका प्रारंभ होता है,नारी की इस सर्वोच्च स्थिति से कि यंत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तंत्रा देवता। अर्थात् जहां नारी की पूजा होती है,वहां देवता निवास करते है। इसका सीधा सा भाव है कि भारतीय व्यवस्था के मूल में नारी को किसी भी प्रकार से कम नहीं आंकते हुए उसे पूरा का जर्दा प्रदान किया गया है। निसंदेह प्राचीन भारत की बानी समाज परिवार में पुरूष के समान ही सम्मान प्राप्त करती रही है। वह मानव सभ्यता व संस्कृति की रीढ़ थी।

संविधान में महिलाओं को भी पुरूषों के समान ही अधिकार प्रदान किये गये है,तता महिलाओं की स्थिति पुरूषों के समकक्ष बनाने तता उनके विकास की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम उठाये गये है। भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिक को 6 मूल अधिका प्रदान किये गये है। ये मूल अधिकार संविधान के भाग तीन में अंकित किये गये है तथा वास्तव में ये मूल अधिकार संविधान मानवीय तथा प्राकृतिक मूल्यों को अभिज्ञापित करते है।

राजनीतिक दलों की स्थिति यह है कि वह महिला संगठनों को भी मात्र वोट बैंक की दृष्टि से देखते हुए उनका उपयोग भर करना चाहते है,जबकि महिला संगठन इसलिये राजनीतिक दलों का सम्बल लेते है,ताकि उनकी सरकारें महिलाओं को समस्याओं से निजात दिलाते हुए पुरूषों के समान अधिकार व्यावहारिक रूप से भी दिलवा सकें। ऐसे में यदि वास्तव में सरकारें महिलाओं को सशक्त बनाना चाहती है,तो उन्हें दलों में भी महिलाओं व महिला संघटनों को समुचित स्थान व सम्मान प्रदान करना ही पड़ेगा। कहना न होगा कि नए महिला संगठनों ने अपने कार्यक्षेत्र को अत्यंत विस्तृत और औचित्यपूर्ण शैली में कार्य करने का अवसर देते हुए महिलाओं का विश्वास भी पहले की अपेक्षा अधिक अर्जित किया,जिस कारण महिलाओं ने इन संगठनों में अपनेपन का भाव अधिक महसूस किया और यही भाव नए संगठनों की सफलता और प्रसिद्धि का मुख्य कारण भी था।

इस प्रकार भारतीय संविधान में विधि के सामने समता के अधिकार के द्वारा महिलाओं को समाज की मुख्यधारा में जोड़ने के अति सशक्त प्रयास किये गये है। विधि के समक्ष समता के अधिकार के अतिरिक्त भी विभिन्न अनुच्छेदों में ऐसे कितने ही प्रावधानों की व्यवस्था पृथक रूप से भी की गयी है,जो महिलाओं के बहुमुखी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है और निभा भी रहे है। इसके उपरांत भी यदि तनिक सी भी सच्चाई को धारण करके बात आगे बढ़ाए तो महिला संबंधी कानून उतने प्रभावी सिद्ध नहीं हो सकें,जितने प्रभावी होने की संभावनायें संविधान निर्माताओं ने जताई थी।

शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के लिये निम्न उद्देश्य निर्धारित किये गये है।

1-नारी आंदोलन की स्थिति।

2-महिला सशक्तिकरण और विभिन्न धार्मिक,समाजिक भूमिका की स्थिति

3-भारत मे महिला संघटनों का विवरणात्मक अध्ययन करना।

4-प्रमुख महिला संघटनों की भूमिकाओं का अध्ययन करना।

5-राजनैतिक दलों के महिला संगठनों का योगदान

6-स्वंयसेवी महिला संगटनों का अध्ययन।

7-नारी शोषण व उत्पीड़न रोकने के वैधानिक उपबंध

सबंधित साहित्य का अनुशीलन

महिला संगठनों की भूमिका में उपलबंध साहित्य बहुत ही बड़ी मात्रा में मिलता है। प्रस्तावित अध्ययन इसकी प्रकृति एवं विषय की दष्टि से बिल्कुल नवीन है। अध्ययन के बारे में सबके तर्क अलग-अलग है। निम्न विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रकट किये है,जो इस प्रकार से है।

कुमकुम राय के अनुसार-ऋग्वेद में एक हजार से ज्यादा सूत्र है। इनमें से महिला मनीषियों द्वारा किये गये पूर्णत अथवा आंशिक रूप से संबंधित श्लोकों की संख्या महज बारह से पद्रंह से ज्यादा नहीं है। यानि तकरीबन सिर्फ एक प्रतिशत। इस तरह महिला मनीषियों का प्रतिनिधित्व स्पष्टत बहुत मामूली है। यदि इसे प्रतिष्ठित पवित्र पंरपराओं के निर्माण में महिलाओं के योगदान का संकेत मान लिया जाये,तो यह संकेत कतई उत्साहजनक और प्रेरणास्पद नहीं है। इतनी ही महत्वपूर्ण बात यह है कि एक तरफ हमें गार्गी जैसी महिला दार्शनिकों की चर्चा मिलती है,वहीं इस बात के बहुत थोड़े प्रमाण मिलते हैं कि शिक्षा प्रसार के औपचारिक संस्थानों में बतौर छात्रा अथवा शिक्षिका,महिलाओं भी उपस्थिति थीं।

दूसरे शब्दों में,ऐसी महिलाओं संभवत नियमित बौद्धिक गतिविधियों में हिस्सेदारी करने के बजाय सिर्फ गाहे-बगाहे ही अपनी उपस्थिति दर्ज कराती थीं.
बंग्ला लेखिका तसलीमा नसरीन का प्रस्तुत कथन द्रष्टव्य है घर की महिलाएं पुरूषों को खाना खिलाने के बाद जो बचता है,वह खाली हैं, इससे उनका पेट तो नहीं भरता,जी जरूर भरता है। पति की जूठन खाने वाला संस्कार बंगाली समाज के लिये कोई नई बात नहीं है। ईसा पूर्व बारहवीं शताब्दी का जो सामाजिक चित्रा वैदिक साहित्य वहन करता है,उसमें देखा जाता है-भुक्ताउच्छिष्ट वघैव ददात्। अर्थात् भोजन खाकर स्त्री को जूठन देना। फटे हुए जूते कपड़े नौकर को देने और बची-खुची जूठन नारी को देने का विदान शास्त्र में रखा गया है।

एम.ए.अंसारी का कथन द्रष्टव्य है दरिद्रता के अभिशाप से दबी नारी मंत्रावत श्रम-क्षेत्र में बाल्यकाल से ही लग जाती है। ये तो भद्रलोग महिलायें है,जो अभिजात्य सांती व संभ्रांत तथा सरकारी क्षेत्र में कार्यरत वर्ग से संबंद्ध है, जो कि शिक्षा प्राप्त करती है। अन्यथा ग्रामीण क्षेत्र व नगरीय क्षेत्र की गरीबी से थोड़ा उपर व गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार की महिलायें तो शिक्षा के बारे में विचार तक नहीं कर सकतीं। कई क्षेत्रों में बाल विवाह की व्याधि से पीड़ित महिलाएं अबोधकाल में ही सुहागिन बन जाती है और ससुराल में जाकर बहु रूप में दासी बन जाती है। भारतीय सामाजिक परिवेश में नारी के अपेक्षा की जाती है-गृहकार्य में दक्षता,चहारदीवारी में सिमटी अस्मिता व पति के परिवार की सेवा और कुछ नहीं। नारी का अंत गृहगर्भ ही उसका है। गर्भ धारण करना तथा जन्म लेने वले बालक का पालन करना ही उसका मुख्य कर्तव्य है। इन भूमिकाओं की पंरपरागत रूप से माता व बहन ही शिक्षा दे देती है। इसके लिए शाला शिक्षा की आवश्यकता नहीं समझी जाती.जबकि नारी का सारा समय पेट की आग को शांत में लगा हो और उसका परिवार गरीबी से जूझ रहा हो,वहां साक्षरता अथवा शिक्षा की बात ही कहां पैदा होती है।

डॉ गोपा जोशी के अनुसार-भारतीय नारी को इस गर्त की गहराई का अहसास नहीं था,जिसमें वह पड़ी थी।
अमानवीय अत्याचार सहन करने के बाबजूद भी नारी समाज के सामने अपना सुख-दर्द रखने के लिये तैयार नहीं होती,क्योकिं उसको दूसरों के सामने अपने घर परिवार की तौहीन करके अपनी प्रतिष्ठा कम करने का भय रहता है।

लाला लाजपतराय ने लिखा था कि बड़े साफगोई से यह बात स्वीकार की जाती है कि अधिसंख्य हिंदु स्त्रियों की दशा शोचनीय थी। कई मामलों में तो उनकी हालत पुरूषों से भी बदत्तर थी। एक अनुपात में पुरूषों(यद्धपि जनसंख् के न्यूनतम प्रतिशत) ने सरकार ईसाई मिशनरियों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा खोले गये स्कूलों,कालेजों में किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त की थी,पंरतु भारतीय स्त्रियों की शिक्षा के प्रसार के लिए पहुत कम काम हुआ था। अंग्रेजों की शासन प्रणाली की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पुरूषों को प्रशासनिक कार्यों के निष्पादन के लिए शिक्षित होना जरूरी पड़ गया। इस संदर्भ में जिन संस्थाओं ने सराहनीय कार्य किया,उनमें पंजाब के आर्य समाज का तथा आगरा एंव अवध के संयुक्त राज्यों का ऊंचा स्थान है. यह बात बड़ी सावधानी से कहा जा सकती है कि स्त्रियां के सोच और जीवन के प्रति दृष्टिकोण में चमत्कारिक परिवर्तन आया।

गांधी के अनुसार-स्त्रियां स्वय को अबला कहना छोड़ दें, वह स्त्री जो दृढता पूर्वक यह मानती है कि उसकी पवित्रता ही उसके सतीत्व की सर्वोच्च ढाल है,उसका शील शर्वथा सुरक्षित है. ऐसी स्त्री के तेज मात्रा से परपुरूष चौधियां जाएगा और लाज के गढ़ जायेगा। स्त्री को अबला कहना उसका अपमान करना है। उसे अबला कहकर पुरूष उसके साथ अन्याय करता है। यदि शक्ति का अभिप्राय पाश्विक शक्ति है तो निसंदेह पुरूष की अपेक्षा स्त्री में कम पशुता है। पंरतु यदि उसका अभिप्राय नैतिक शक्ति से है,तो निश्चितत पुरूष की अपेक्षा स्त्री अधिक शक्तिशाली है। यदि अंहिसा हमारे जीवन का मूलमंत्र है तो कहना होगा कि इस देश का भविष्य स्त्रियों के हाथ में है।

प्रस्तावित अध्ययन योजना

प्रथम अध्याय	प्रस्तावना
द्रितीय अध्याय	महिला सशक्किकरण और विभिन्न धार्मिक व सामाजिक संगठन
तृतीय अध्याय	भारत में महिला संगठनों का परिचयात्मक विवरण
चतुर्थ अध्याय	राजनीतिक दलों के महिला संगठन
पंचम अध्याय	स्वंयसेवी महिला संगठन
षष्ठ अध्याय	मानवाधिकार
सप्तम अध्याय	भावी अनुसंधान हेतू निष्कर्ष

संदर्भ ग्रंथ सूची

- अंसारी,एम.ए.,नारी चेतना और अपराध,पंचशील प्रकाशन,जयपुर-1989।
- अग्रवाल,बीना,ए फीडल ऑफ वन्स आवन,वुमन एंड लैण्ड लाइट्स इन साउथ एशिया,कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस,नई दिल्ली,1994.
- आर्य,सं साधना,निवेदिता मेनन,जिनी लोकनीता-नारीवादी राजनीति,संघर्ष एंव मुद्दे,हिंदी
- अनामिका,स्त्री का मानचित्र,सारांश प्रकाशन प्रा,लि.नई दिल्ली 1999।
- अमृत कौर,राजकुमारी चेलेन्ज टू वीमैन,प्रीतम प्रकाशन,अमृतसर 1968.
- बंसल, नाराय़ण-भारतीय नारी,इंडियन बुक कंपनी,नई दिल्ली।
- बाथला,सोनिया,वीमैन,डैमॉक्रेसी एंड द मीडिया,सेज पब्लिकेशन,नई दिल्ली-1998।
- बाला उषा,इंडियन वीमैन प्रीडम फाइटर्स,नेशनल पब्लिकेशिंग हाउस,नई दिल्ली-1987।
- चक्रवर्ती,रेनू,कम्यूनिज्म एंड द इंडियन वीमैन्स,मूवमैंट पी.पी.एच.,नई दिल्ली 1998।
- दिग्गुल दयाराम-द स्टेटस ऑफ वीमैन इन इंडिया,राधा पब्लिकेशन्स,नई दिल्ली 2003।
- गांधी महात्मा,महिलाओं से गांधी ग्रंथसार प्रकाशन,दिल्ली 1947।
- जोशी,डॉ गोपी,भारत में स्त्री असमानता-एक विमर्श,हिंदी माध्यक कार्यान्वयन निदेशालाय,दिल्ली विश्वविद्यालय,दिल्ली-2006।
- जैन,सुशाला,मानुषी गौतम बुक डिपो,नई दिल्ली 1999।
- कुमार,मनीष-भारतीय नारी-कल आज और कल,ग्रेसी बुक्स,दिल्ली प्रथम संस्करण 2006,पेज 7-8।
- महेश्वरी,सरला-नारी प्रश्न,राधा कृष्ण प्रकाशन,प्रा.लि.नई दिल्ली 1998।
- नंगला,बी.के.,महिलाओं के लिए कानून और न्याय,रावत पब्लिकेशन,जयपुर।
- नसरीन,तसलीमा,औरत के हक में,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,पेज 102।
- नंदी आशीष,द इण्टिमेट एनेमी,साहित्य प्रकाशन,नई दिल्ली 1987।
- पिथाइसन,गेल-रिजर्व सीट्स,वीमैन एंड द वोट इन बाम्बें पापुलर,मुबई 1995।
- फुलर,माक्र्स वी, द रांग्स फ इंडियन वीमैनहुड,किताब घर,दिल्ली 2004।
- रानी,आशु-महिला विकास कार्यक्रम,इनाश्री पब्लिशर्स,जयपुर-2004
- राधाकुमार,स्त्री संघर्ष का इतिहास,1800-1900,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,द्रितीय संस्करण-2004।

- वोहरा,आशारानी-भारत की अग्रणी महिलाएं,राजपाल एंड संस दिल्ली 1987